(MIJ) 2020, Vol. No. 6, Jan-Dec **e-ISSN: 2454-924X; p-ISSN: 2454-8103**

संस्कृत काव्यों में अलंकार का पाण्डित्यपूर्ण प्रदर्शन एवं प्रयोग

डॉ नीरज कुमारी

सह . आचार्य, संस्कृत विभाग, ठाकुर बीरी सिंह महाविद्यालय, टूंडला, फिरोजाबाद, भारत

SCHOLARLY DISPLAY AND USE OF FIGURES OF SPEECH IN SANSKRIT POEMS

Dr. Neeraj Kumari

Associate Professor, Sanskrit Department

Thakur Biri Singh Degree College Tundla, Firozabad, India

ABSTRACT

The miraculous and interesting form of language which is equipped with semantics and makes it beautiful is called 'Alankaar'. Just as the beauty of the body increases with gold ornaments, in the same way the beauty of poetry increases with 'Alankaars'. 'Alam' means jewel.

सारांश

*भाषा का शब्दार्थ से सुसज्जित तथा सुन्दर बनाने वाले चमत्कृतिपूर्ण एवं रोचक स्वरूप को अलंकार कहा जाता है। जिस प्रकार स्वर्ण आदि आभूषणों से शरीर की शोभा बढ़ती है, इसी प्रकार अलंकार से काव्य की शोभा बढ़ती है। इस प्रकार **'अलम्'** शब्द का अर्थ है–**'भूषण'**। जो अलंकृत, भूषित या सुशोभित करे, वही अलङ्कार है–**'अलंकरोतीति अलंकारः'** अथवा **'अलंक्रियतेऽनेनेति अलंकारः'** अर्थात् सौन्दर्य संवर्द्धन व शोभा–प्रसाधन के उपकरण ही अलङ्कार कहे जाते हैं।*

परिचय

"'अलंकार' शब्द का अर्थ अलंकृति अर्थात् अलम् + कृ + क्तिन् प्रत्यय पूर्वक व्युत्पत्ति हुई है तथा अलंकार की अलम् + कृ + घञ् प्रत्यय पूर्वक व्युत्पत्ति हुई है, जिसका अर्थ है– भूषण या शोभा का भाव।"[110]*लौकिक जगत् में मनुष्य जैसे अपने शरीर को वस्त्राभूषणादि से सुसज्जित करके अपनी सुन्दर छवि समाज के सम्मुख प्रस्तुत करना चाहता है, वैसे ही कवि अपनी काव्यकृति को रस, भाव, विभाव, गुण, रीति, जीवनदृष्टि आदि के द्वारा सुन्दरतम रूप में प्रस्तुत करना चाहता है। इस प्रस्तुति को अधिक रमणीय और कलात्मक बनाने वाले उपकरणों को ही अलङ्कार कहा जाता है।*

(MIJ) 2020, Vol. No. 6, Jan-Dec **e-ISSN: 2454-924X; p-ISSN: 2454-8103**

आचार्य दण्डी ने अलङ्कारों को काव्य की शोभा उत्पन्न करने वाला धर्म बतलाते हुए रस, भाव, रीति, गुण इत्यादि काव्याङ्गों और सन्धि, सन्ध्यङ्ग, वृत्ति, वृत्त्यङ्ग आदि नाट्य तत्त्वों को भी अलङ्कारों के अन्तर्गत समाहित कर लिया है। आचार्य दण्डी के अनुसार–

काव्यशोभाकरान् धर्मान् अलङ्कारान् प्रचक्षते।

यच्च संन्ध्यङ्ग वृत्यङ्ग लक्षणाद्यागमान्तरे।

व्यावर्णितमिदं वेष्टम् अलंकारतयैव नः ।।

आचार्य वामन के अनुसार अलङ्कार के कारण ही काव्य ग्रहणीय होता है एवं यह अलङ्कार सौन्दर्य है–

काव्यं ग्राह्यमलंकारात् ।सौन्दर्यमलङ्कार।

आचार्य भामह ने अलङ्कार को सर्वोपरि तत्त्व माना है। वे कहते हैं कि स्त्री का सुन्दर मुख भी आभूषण के बिना शोभा नहीं पाता–

न कान्तमपि निर्भूषं। विभाति वनितामुखम्।।

इसके विपरीत रसवादी एवं ध्वनिवादी आचार्यों ने लङ्कार को रसभावादि अलङ्कार्य का उपकारक, शोभा वृद्धि का साधन तथा शब्दार्थ का अनित्य धर्म स्वीकार किया है। आचार्य मम्मट की मान्यता है कि जिस प्रकार हारादि आभूषण शारीरिक सौन्दर्य के संवर्द्धक होते हैं, उसी प्रकार अलङ्कार काव्य में विद्यमान अङ्गीरस के उपकारक होते हैं–

उपकुर्वन्ति तं सन्तं येऽङ्गद्वारेण जातुचित्। हारादिवदलंकारस्तेऽनुप्रासोपमादयः।।

आचार्य विश्वनाथ ने भी काव्य की शोभा बढ़ाने वाले शब्द व अर्थ के उन अस्थिर धर्मों को अलङ्कार कहा है, जो रसादि के उसी प्रकार उपकारक होते हैं, यथा आभूषण शरीर के सौन्दर्यवर्धक होते हैं–

शब्दार्थयोरस्थिराः ये धर्माः शोभातिशायिनः।

रसीदीनुपकुर्वन्तोऽलंकारास्तेऽङ्गादिवत्।।[16]

इस प्रकार आचार्यों के द्वारा अलंकार विषयक विवेचन स्पष्ट किया गया है। जिस प्रकार कहा गया है कि स्त्री के सौन्दर्य का वर्धन आभूषण करते हैं, उसी प्रकार काव्य का सौंदर्यवर्धन अलंकार करते हैं। इसी बात को ध्यान में रखते हुए अर्वाचीन संस्कृत गीतकारों ने भी अपनी–अपनी कृतियों का अलंकारों द्वारा सौन्दर्यवर्धन किया है।

(MIJ) 2020, Vol. No. 6, Jan-Dec **e-ISSN: 2454-924X; p-ISSN: 2454-8103**

अलंकार का आधार शब्द और अर्थ होते हैं। इसी हेतु अलंकार के तीन प्रकार हैं–'शब्दालंकार, अर्थालंकार और उभयालंकार।

शब्दालंकार– *जो शब्द पर आश्रित हैं। शब्द का परिवर्तन हो जाने पर अर्थात् किसी शब्द का पर्यायवाची शब्द रख देने पर जहाँ अलंकार नहीं रहता, वे शब्दालंकार कहलाते हैं।*

अर्थालंकार– *जो अर्थ पर आश्रित हैं। जहाँ किसी शब्द का पर्यायवाची शब्द रख देने पर भी अलंकार बना रहता है, वे अर्थालंकार कहलाते हैं।*

उभयालंकार– *जो अलंकार शब्द और अर्थ दोनों पर आश्रित हैं, वे उभयालंकार कहलाते हैं।शब्दालंकारों के रूप में अनुप्रास, यमक तथा वक्रोक्ति इत्यादि अलंकारों का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है तथा अर्थालंकारों के रूप में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास, प्रतिवस्तूपमा, स्वभावोक्ति तथा निदर्शना इत्यादि अलंकारों का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।*

शब्दालंकार

अनुप्रास

अनुप्रास वह शब्दालंकार है, जिसमें वर्णों की समानता होती है। वर्ण साम्य अर्थात् स्वरों के असमान होने पर भी व्यञ्जनों की समानता होती है।

अनुप्रासः शब्दसाम्यं वैषम्येऽपि स्वरस्य यत्।

यमक

यमक वह शब्दालंकार है, जिसके सार्थक शब्द होने पर भिन्न अर्थ वाले स्वर व्यञ्जन समूह की पूर्वक्रमानुसार आवृत्ति होती है। इस अलंकार में कहीं–कहीं तो दोनों पद सार्थक होते हैं और कहीं–कहीं निरर्थक और कहीं ऐसा होता है कि एक पद तो सार्थक होता है और दूसरा निरर्थक होता है।

सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यञ्जनसंहतेः। क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते।।

वक्रोक्ति

वक्रोक्ति वह शब्दलंकार है जहाँ श्लेष के कारण अथवा काकु (ध्वनि–विकार) के कारण किसी के अन्यार्थक वाक्य को किसी अन्य अर्थ में लगा दिया जाता है। वक्रोक्ति अलंकार 'श्लेष' के कारण ऐसा होने से 'श्लेष–वक्रोक्ति' और 'काक' के कारण ऐसा होने से वक्रोक्ति को दो रूपों में प्रयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ प्रस्तुत है–

(MIJ) 2020, Vol. No. 6, Jan-Dec **e-ISSN: 2454-924X; p-ISSN: 2454-8103**

शम्भो ! कीदृशमिदमधरोत्तदरं तव सृष्टौ यद् गर्दभा वहन्त्यलङ्कृतराजपुरुषान्

अश्वाश्च पण्यभूतं लवणशाकतैलम्।

दुत्क्रियन्ते गृहद्वारमागता भिक्षुका उत्सङ्गज्चाधिरोप्यन्ते दुर्ललितसारमेयाः।

पूज्यन्ते भूतप्रेतपिशाचा उपेक्ष्यन्ते च पज्चदेवाः।।

प्रस्तुत गीत में गीतकार द्वारा ईश्वर को उलाहना दी गई है कि हे प्रभो ! यह कैसी सृष्टि रची है आपके द्वारा ? यहाँ गधा (मूर्ख पुरुष) राजपुरुष की श्रेणी को अलंकृत करता है। भूतप्रेतों की पूजा की जा रही है और देवताओं की उपेक्षा हो रही है। इस प्रकार सम्पूर्ण गीत में वक्रोक्ति अलंकार का प्रयोग हुआ है।

अर्थालंकार

उपमा

साम्यं वाच्यमवैधर्क्यं वाक्यैक्य उपमा द्वयोः।

जहाँ के वाक्य में उपमेय तथा उपमान का वैधर्म्यरहित (साधर्म्य) तथा वाच्य द्वारा प्रातिपादित सादृश्य (साम्य) हो वहाँ उपमा अलंकार होता है। इस प्रकार जहाँ उपमेय तथा उपमान का भेद होने पर उनके गुण, क्रिया तथा धर्म की समानता का वर्णन हो वह उपमा अलंकार कहलाता है। एक सुन्दर उदाहरण इस प्रकार है–

वर्त्तिक्याऽसि कयापि वर्द्धितस्तेन भासयसि लोकम्,

उत्साहितो हितैषिभिर्नवः कविरिव प्रतिभाऽऽलोकम्।

प्रस्तुत गीत में दीपक को उकसाने का प्रसंग है। दीपक नये कवि के समान है। दीपक की बाती को उकसा देने से वह जिस प्रकार ज्योति फैलाता है। उसी प्रकार हितैषियों द्वारा उत्साहित नया कवि अपनी रचना प्रतिभा से लोकजीवन को उद्भासित करने में समर्थ होता है। इस प्रकार यहाँ दीपक की तुलना कवि से की गई है, जिस कारण यहाँ उपमा अलंकार प्रयुक्त है।

रूपक

रूपकं रूपितारोपो विषये निरपह्नवे।

अर्थात् निषेध के न रहते जहाँ उपमेय में उपमान का आरोप हो वहाँ रूपक अलङ्कार होता है। जिसके उदाहरण इस प्रकार हैं–

(MIJ) 2020, Vol. No. 6, Jan-Dec **e-ISSN: 2454-924X; p-ISSN: 2454-8103**

कुवलय–किसलयसुकुमारं नीहारहारहरधवलम्।

बालकुरङ्गातरङ्गायासिसतशमाऽऽकाया।'

कमलदलायतनयनं कृतरुचिचयनम्बिलोक्य गोविन्दम्।

तव नवलावाण्याम्बुधिसलिल लवलीलया विहीनः
दोलाकालविलोलापाङ्गश्चञ्चललोचनमीनः

प्रस्तुत पंक्तियों में भगवान कृष्ण के स्वरूप के वर्णन में तथा दीन मछली के उपमान द्वारा नायिका के आरोपण में रूपक अलंकार का प्रयोग किया गया है।

उत्प्रेक्षा

उत्प्रेक्षा वह अलंकार है जिसे अप्रकृत के रूप में प्रकृत की संभावना कहा जाता है। किसी प्रस्तुत वस्तु की अप्रस्तुत वस्तु के रूप में संभावना करना उत्प्रेक्षा अलंकार कहलाता है।

भवेत्संभावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना। वाच्या प्रतीयमाना सा प्रथमं द्विविधा मता।।

एक उदाहरण इस प्रकार स्पष्ट है–

कुप्यानि हन्त कस्मै ? भाग्याम्बरे मदीये ज्योत्सना धनैः परीता जीवामि भूतलेऽहम्।।

मन्ये कृतान्तगेहे भ्रान्तास्ति मृत्युबाला यस्मादहोऽभिराजं जीवामि भूतलेऽहम्।।[149]

प्रस्तुत गीत में उपमेय में उपमान की संभावना की गई है कि सम्मान भी और अपमान भी संत्रास भी और आह्लाद भी इस प्रकार जीवन व्यतीत करने की अभीप्सा व्यक्त की गई है। अतः यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार का प्रयोग हुआ है।

स्मरण अलङ्कार

स्मरण वह अलङ्कार है जहाँ (अनुभूत) के समान किसी वस्तु के उपलब्ध होने पर पूर्वानुभूत प्रकार से उस वस्तु की स्मृति होती है, वहाँ स्मरण अलङ्कार होता है।

सदृशानुभवाद्वस्तुस्मृतिः स्मरणमुच्यते।।[153]

*कुछ इसी प्रकार की समृति को अनुभूत कराते हुए आचार्य रमाकान्त शुक्ल ने **'भाति मे भारतम्'** गीतकाव्य में स्मरण अलङ्कार का प्रयोग किया है–*

शम्प्रदं शङ्कर माधवं राघवं पार्वतीं राधिकां जानकीं च स्तुवत्।

(MIJ) 2020, Vol. No. 6, Jan-Dec **e-ISSN: 2454-924X; p-ISSN: 2454-8103**

विट्ठलं बुद्धदेवं जिनं च स्मरद् भूतले भाति मेऽनारतं भारतम्।।

अर्थात् जगत् के कल्याणकर्त्ता उमा–महेश, राधा–कृष्ण और सीता–राम की स्तुति करता हुआ तथा विट्ठल, बुद्धदेव तथा जिनेन्द्र का स्मरण करता हुआ मेरा भारत भूमण्डल में अनवरत सुशोभित रहता है।

उल्लेख

उल्लेख वह अलङ्कार है जहाँ ग्रहीता अर्थात् ज्ञाताओं के भेद से या विषय अर्थात् हेतु और अवच्छेदक आदि के भेद से एक वस्तु का अनेक प्रकार से उल्लेख करना उल्लेख अलङ्कार कहलाता है।

क्वचिद् भेदाद् ग्रहीतृणां विषयाणां तथा क्वचित्।

एकस्यानेकधोल्लेखो यः, स उल्लेख उच्यते।।

अतिशयोक्ति

अतिशयोक्ति वह अलंकार है जिसे अध्यवसाय की सिद्धि की प्रतीति कहते हैं।

सिद्धत्वेऽध्यवासायस्यातिशयोक्तिर्निगद्यते।

*आचार्या पुष्पा दीक्षित जी ने अपने काव्य **'अग्निशिखा'** में अतिशयोक्ति अलंकार का सुन्दर प्रयोग किया है जो इस प्रकार वर्णित है–*

तेजस्विता भवता समं सूर्यादयोऽपि न धर्मिता।।

अर्थात् तेजस्विता सूर्य की प्रचण्डता के भी अधिक है। इस प्रकार यहाँ अतिशयोक्ति होने से इस अलंकार का प्रयोग सार्थक प्रतीक होता है।

प्रतिवस्तूपमा

जहाँ दो वाक्यों में साम्य प्रतीत हो रहा हो और एक ही धर्म को भिन्न–भिन्न शब्दों द्वारा निर्विष्ट किया जाए वहाँ प्रतिवस्तूपमा अलंकार माना जाता है।

प्रतिवस्तूपमा सा स्याद वाक्य योर्गम्यसाम्ययोः।

एकोऽपि धर्मः सामान्यो तत्र निर्विश्यते पृथक्।।

प्रस्तुत उदाहरण में इस प्रकार है–

यन्मुनीनां तपस्यास्थली कथ्यते यत्परब्रह्मलीलास्थली विद्यते।

यच्च नानाकथानां निधी राजते भूतले भाति तन्मामकं भारतम्।।

जो मुनियों की तपस्या स्थली है, जो परब्रह्म की लीलास्थली है और जो अनेक कथाओं का खजाना है, ऐसा यह भारत है। इस प्रकार प्रत्येक वाक्य में साम्यता की प्रतीति है। अतः प्रतिवस्तूपमा अलंकार का स्पष्ट प्रयोग अपेक्षनीय है।

निदर्शना

जहाँ वस्तुओं का परस्पर सम्बन्ध संभव अथवा असम्भव (उपपन्न अथवा अनुपपन्न) होकर उनके बिम्बप्रतिबिम्बभाव का बोधन करे वहाँ निदर्शना अलंकार होता है।

सम्भवन् वस्तुसम्बन्धोऽसम्भवन् वाऽपि कत्रचित्। यत्र बिम्बानुबिम्बत्वं बोधयेत्सा निदर्शना।।

*आचार्य राजेन्द्र मिश्र ने **'मृद्वीका'** काव्य में निदर्शना अलंकार का प्रयोग किया है जो कि एक उदाहरण द्वारा प्रस्तुत है–*

दैव प्रतिकूलं यदा भवेत् सुमनोऽपि च शूलं सदाभवेत् शमयति नहि वचनं दिने दिने।।

प्रस्तुत पंक्तियों में यहाँ की प्रतिकूलता प्रदर्शित करने के लिए सुमन का शूल के समान कष्टकारक होना संभव होने से सम्भव वस्तु सम्बन्ध होना। इस प्रकार यहाँ निदर्शना अलंकार का प्रयोग हुआ है।

अप्रस्तुतप्रशंसा

अप्रस्तुतप्रशंसा वह अलङ्कार है जहाँ दो वाक्यार्थों में सादृश्य प्रतीयमान होता है। (वाच्य न हो) उनमें यदि एक ही साधारण धर्म को पृथक्–पृथक् शब्दों से कहा जाय तो 'प्रतिवस्तूपमा अलङ्कार' होता है।

अप्रस्तुतप्रस्तुतयोर्दीपकं तु निगद्यते। अथ कारकमेकं स्यादनेकासु क्रियासु चेत्।।

*आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री कृत **'काकली'** गीतसंग्रह के **'कल्लोलिनीम्प्रति'** नामक गीत में गीतकार द्वारा गङ्गा के अभिराम वर्णन में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार की अभिनव प्रस्तुति की है–*

चन्द्रशेखरस्यास्य गिरीशस्यासि प्रिया सानन्दे।

पदद्वन्द्वमरविन्दमहन्ते मन्दं मन्दं वन्दे।

गिरेस्तुङ्गश्रङ्गादवपतीर्णायास्ते गुणाः प्रियाः कति?

शङ्करजीवनसारभूत–पूते हे नूतनपार्वति!

(MIJ) 2020, Vol. No. 6, Jan-Dec **e-ISSN: 2454-924X; p-ISSN: 2454-8103**

कृष्णादतिकठिनादस्माज्जाता गौरी सुकुमारी,

द्योतः परितो हरितो राजति सह्रदयह्रदयविहारी।

क्रीडति सलिलेऽमले सलीलं कमनीयाकृतिकरिणी,

मन्दं विहरत्युपुलिनन्तं मनोहारिणी हरिणी।

मृगमृगेन्द्रयोस्त्वज्जलपानात्पूतप्रीतिरादरिणी,

परिमलविमलशीतलाङ्गीयं जयति वने निर्झरिणी।

चम्पकचन्दनचारु चपलपाटलदलनीलनिकुञ्जम्,

सरससैकते ते सुकुमारि! विलोल–बालतृणकुञ्जम्।

*प्रस्तुत गीत में कवि ने **'सागर'** और **'निर्झरिणी'** को क्रमशः नायक और नायिका के रूप में प्रस्तुत कर मानव जीवन की प्रतीकात्मक अभिव्यञ्जना की है। इसमें कवि कहते हैं कि हे आनन्ददायिनी! तुम तो चन्द्रशेखर भगवान् शिव और इनका निवास स्थान हिमालय की प्रिया हो। मैं तुम्हारे चरण कमलों को धीरे–धीरे प्रणाम कर रहा हूँ। भगवान् शंकर के जीवन की सारभूत परमपवित्रे हे नूतन पार्वती! पर्वत की चोटी से उतरकर आई तुम्हारी कितनी प्रशंसा करूँ? तुम्हारे तो कितने प्रिय गुण हैं। तुम पवित्र जल में लीला के साथ विहार करती हो। तुम्हारी आकृति अत्यन्त ही कमनीय है। मन को हरण करने वाली हरिणी तुम्हारे किनारे पर धीरे–धीरे विचरण करती रहती है। इस प्रकार सम्पूर्ण गीत में निर्झरिणी (साधारण धर्म) के प्रति पृथक–पृथक शब्दों द्वारा वर्णन किया गया है, जिससे प्रतिवस्तूपमा अलंकार की पुष्टि होती है।*

अर्थान्तरन्यास

जहाँ सामान्य से विशेष का विशेष से सामान्य का, कार्य से कारण का अथवा कारण से कार्य का साधर्म्य या वैधर्म्य से समर्थन हो, वहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार माना गया है।

सामान्यं वा विशेषेण विशेषस्तेन वा यदि।

कार्य च कारणेनेदं कार्येण च समर्थ्यते।।

साधर्म्येणतरेण र्थान्तरन्यासो तः।।

*सामान्य से विशेष और विशेष से सामान्य के प्रतिपादन में अर्थान्तरन्यास अलङ्कार की योजना द्वारा कवि जानकीवल्लभ शास्त्री जी ने श्रेष्ठ चमत्कार उत्पन्न किया है। **'काकली'***

की नीतिसूक्तिसिक्त भाषा में लोकोक्तियों और मुहावरों का जो मणिकांचन संयोग है वह विलक्षण है–

ज्वलयसि रामनाम् वदने, पार्श्वे च करोष्यसिसङ्गम्[172]

(मुख में राम बगल में छुरी)

कालधौते सौरभ्यं स्यात्।

(सोने में सुगन्ध)

काका लाल्यन्ते हन्यन्ते कलकीराः।

(कोए को दुलार, सुग्गे को मार)

विषम

विषम अलंकारवह है जहाँ विभिन्न संभावनाओं यथा कारण और कार्य के गुण अथवा उनकी क्रियायें परस्पर विरुद्ध रूप से वर्णित हों, जब आरब्ध कार्य की विफलता और साथ ही उसमें अनर्थ की उत्पत्ति का वर्णन हो, जब दो विरुद्ध पदार्थों की परस्पर संघटना का उपनिबन्ध हो इन सभी संभावनाओं में विषम अलंकार होता है।

यद्वारब्धस्य वैफल्यमनर्थस्य च सम्भवः।

विरूपयोः संघटना या च तद्विषमं मतम्।।

दो विषम परिस्थितियों का उल्लेख एक साथ इस प्रकार है–

देवेन सकलं जीवनं परिषेचितं गरलेन किम्।

तव दर्शने प्रसमं कथं गरलेन पीयूषयायितम्।।

प्रस्तुत गीति में सुख के लिए अमृत और दुःख के लिए विष का विशेषण दिया गया है जिससे यहाँ विषम अलंकार की प्रतीति हो रही है।

विरोध

जहाँ वस्तुओं का उनमें वस्तुतः किसी प्रकार का , विरोध न होने भी इस प्रकार वर्णन किया जाये जिससे उनमें विरोध की प्रतीति हो वहाँ विरोध अलंकार होता है।

विरोधः सोऽविरोधेऽपि विरुद्धत्वेन यद्वचः।

(MIJ) 2020, Vol. No. 6, Jan-Dec **e-ISSN: 2454-924X; p-ISSN: 2454-8103**

वैधर्म्यमूलक अलङ्कार में विरोध अलङ्कार महत्त्वपूर्ण है। इसके विनियोजन में आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री जी ने अत्यन्त निपुणता दिखाई है। विरोध अलङ्कार में दो परस्पर विरोध भाव एक साथ प्रतीत होते हैं।

स्थावरमपि जङ्गमयति, गमयति नमयति स्वान्तञ्चलताम्।

हन्त सन्तमपि चलयति कलयति मार्गे मनोऽपि चलताम्।

× × ×

किमिति विप्रयोगे जलदः पातयति तप्ततरतैलम्?

शीतलतमोऽप्यसौ सुधाकरः कुरुते ज्वलनचरित्रम्?

प्रस्तुत पंक्तियों में विरोधी कथनों का उल्लेख इस प्रकार है कि क्या वियोग में यह बादल गर्म तेल नहीं बरसाता है? शीतलतम यह चन्द्रमा भी अपने दाहक चरित्र को ही प्रदर्शित करता है, भला यह प्रेम, की विचित्रता नहीं तो और क्या है? इस प्रकार यहाँ विरोध अलंकार पूर्णरूपेण दृष्टिगोचर है।

विशेषोक्ति

विशेषोक्ति वह अलंकार है जिसे कारण के सद्भाव में कार्य का फल प्राप्त न होने पर अभाव–वर्णन होता है। हेतु के रहते हुए भी विशेषोक्ति अलंकार होता है।

सति हेतौ फलाभावे विशेषोक्तिस्तथा द्विधा।

प्रस्तुत उदाहरण में दर्शनीय है–

व्योम्नि नैराश्यमूर्व्यामविश्वस्तता।

भ्रान्तिकुन्ते दिगन्ते क्व यामो वयम्?

वेष्टितं चन्दनं क्रूरकाकोदरैः।

दुर्विषं गन्धवाहे क्व यामो वयम्?

प्रस्तुत गीत में व्यक्ति विशेष की नैराश्य की भावना का वर्णन हुआ है कि वे क्या करें? दिन–प्रतिदिन श्रम करने पर भी आवश्यक फल प्राप्ति न हो। इस प्रकार विशेषोक्ति अलंकार का प्रयोग हुआ है।

स्वभावोक्ति

(MIJ) 2020, Vol. No. 6, Jan-Dec **e-ISSN: 2454-924X; p-ISSN: 2454-8103**

दुरूह अर्थात् कविमात्र से ज्ञातव्य जो बालकों आदि की चेष्टाएँ या स्वरूप, उनके वर्णन को स्वभावोक्ति अलंकार कहते हैं। इस प्रकार किसी वस्तु के असाधारण धर्म का वर्णन ही स्वभावोक्ति अलंकार है।

स्वभावोक्तिर्दुरूहार्थस्वक्रियारूपवर्णनम्।

जो इस प्रकार अवलोकनीय है–

महाकालपूजास्वरललिता कालिदासकविताकोमलता भुवनमलङ्कुरुते। उज्जयिनी जयते।।

अर्थात् जो महाकाल के पूजा स्वर से सुललित है। कालिदास की कविता से कवलित है। स्थान–स्थान पर जो स्वयं को अलंकृत करती है, ऐसी उज्जयिनी नगर की शोभा रमणीय है। इस प्रकार प्रस्तुत गीत में स्वभावोक्ति अलंकार का प्रयोग हुआ है।

सन्दर्भ

1. *काव्यादर्श – 2/1*
2. *काव्यालंकारसूत्रवृत्ति, वामन 1/1/2*
3. *काव्यालंकार भामह – 1/13*
4. *काव्यप्रकाश – 8/67*
5. *मृद्वीका – पृष्ठ सं. 33*
6. *आयतिः, न गताः – पृष्ठ सं. 5*
7. *परिदेवनम् पृष्ठ सं. 14*
8. *निर्झरिणी – पृष्ठ सं. 93*
9. *गीतधीवरम् – पृष्ठ सं. 27*
10. *कापिशायिनी – पृष्ठ सं. 7*
11. *शाश्वती – पृष्ठ सं. 23*
12. *मधुपर्णी – पृष्ठ सं. 136*
13. *गीतकन्दलिका– पृष्ठ सं. 33*
14. *तदेव गगनं सैव धरा – पृष्ठ सं. 55*
15. *निर्झरिणी – पृष्ठ सं. 16*
16. *भाति मे भारतम् – पृष्ठ सं. 51*
17. *वाग्वधूटी – पृष्ठ सं. 6*
18. *श्रुतिम्भरा – पृष्ठ सं. 32*
19. *बालगीताली– पृष्ठ सं. 29*
20. *साहित्य दर्पण – पृष्ठ सं. 371*
21. *भाति मे भारतम् – पद्य सं. 30*
22. *कौमारम् – पृष्ठ सं. 10*
23. *साहित्य दर्पण – पृष्ठ सं. 323*

24. *अग्निशिखा – पृष्ठ सं. 51*
25. *निस्यन्दिनी – पृष्ठ सं. 78*
26. *साहित्य दर्पण – पृष्ठ सं. 329*
27. *भाति मे भारतम् – पद्य सं. 31*
28. *लसल्लतिका– पृष्ठ सं. 72*
29. *साहित्य दर्पण – पृष्ठ सं. 331*
30. *मृद्वीका – पृष्ठ सं. 40*
31. *अग्निशिखा – पृष्ठ सं. 42*
32. *साहित्यदर्पण – पृष्ठ सं. 342*
33. *काव्यप्रकाश, दशम उल्लास – पृष्ठ सं. 619*

REFERENCES

1. Kavyadarsh, 2/1
2. Kavyalankarsootravritti, Vaman, 1/1/2
3. Kavyalankar Bhamah 1/13
4. Kavyaprakash 8/67
5. Mridvika, pg 33
6. Aayatih, na Gatah, pg 5
7. Paridevnam, pg 14
8. Nirjharini, pg 93
9. Geetdheevaram, pg 27
10. Kapishayani, pg 7
11. Shashvati, pg 23
12. Madhuparni, pg 136
13. Geetkandlika, pg 33
14. Tadaiv Gaganan Saiv Dhara, pg 55
15. Nirjharini, pg 16
16. Bhati me Bharatam, pg 51
17. Vagvadhooti, pg 6
18. Shrutimbhara, pg 32
19. Balgitali, pg 29
20. Sahitya Darpan, pg 371
21. Bhati me Bharatam, Verse 30
22. Kaumaram, pg 10
23. Sahitya Darpan, pg 323
24. Agnishikha, pg 51
25. Nisyandini, pg 78
26. Sahitya Darpan, pg 329
27. Bhati me Bharatam, Verse 31
28. Lasallatika, pg 72

29. Sahitya Darpan, pg 331
30. Mridvika, pg 40
31. Agnishikha, pg 42
32. Sahitya Darpan, pg 342
33. Kavyaprakash, Dashan Ullas, pg 619